



प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (227) क्रमांक 6315/2008

याचिकाकर्तागण (प्रतिवादीगण): श्री संतोष कुमार एवं अन्य

विरुद्ध

उत्तरवादीगण (वादीगण): पुष्पा कुमार एवं अन्य

प्रकरण को निर्णय एवं आदेश की उद्घोषणा हेतु दिनांक दिनांक 15/12/2008

सूचीबद्ध करें।

सही/-

सतीश के. अग्निहोत्री  
न्यायाधीश





छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (227) क्रमांक 6315/2008

याचिकाकर्तागण (प्रतिवादीगण):

1. श्री संतोष कुमार, आयु 38 वर्ष, पिता श्री बंशीदास वैष्णव।
2. श्री लक्ष्मी कुमार, पिता बंशीदास, जाति वैष्णव, आयु 45 वर्ष।  
(दोनों निवासी ग्राम बीपतपुर, प.ह.नं. 24, राजस्व विभाग एवं उप तहसील कुंडा, तहसील पंडरिया, जिला कबीरधाम (छ.ग.)

विरुद्ध

उत्तरवादीगण (वादीगण):

1. पुष्पा कुमार, पिता बंशीदास, आयु 50 वर्ष।
2. विधराज, पिता पुष्पा कुमार, आयु 31 वर्ष।
3. राजकेशर, पिता पुष्पा कुमार, आयु 29 वर्ष।
4. जागेश्वर, पिता पुष्पा कुमार, आयु 27 वर्ष।

(सभी निवासी ग्राम बीपतपुर, प.ह.नं. 24, राजस्व विभाग एवं उप तहसील कुंडा, तहसील पंडरिया, जिला कबीरधाम (छ.ग.)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन प्रस्तुत रिट याचिका

एकल पीठ: माननीय श्री सतीश के. अग्निहोत्री, न्यायाधीश

उपस्थिति:

याचिकाकर्तागण हेतु श्री संजय एस. अग्रवाल, अधिवक्ता एवं श्री अमृतो दास, अधिवक्ता।

उत्तरवादीगण हेतु श्री प्रफुल्ल भारत, अधिवक्ता।



(दिनांक 15.12.2008 को पारित)

1. इस याचिका में, जिला न्यायाधीश, कबीरधाम (कवर्धा) द्वारा विविध सिविल अपील क्रमांक 05/2008 में पारित आदेश दिनांक 06.11.2008 (संलग्नक पी/1) को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2, पंडरिया द्वारा व्यवहार वाद क्रमांक 04-ए/2008 में पारित आदेश दिनांक 01.08.2008 (संलग्नक पी/12), जिसमें व्यवहार प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'व्यवहार प्रक्रिया संहिता') के आदेश 39 नियम 1 एवं 2 के तहत दायर आवेदन को खारिज किया गया था, को अपास्त कर दिया गया और जिला न्यायाधीश ने उत्तरवादीगण/वादीगण के पक्ष में अंतर्वर्ती व्यादेश प्रदान किया।

2. याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत संक्षेप में तथ्य यह हैं कि उत्तरवादीगण/वादीगण ने याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण के विरुद्ध वादपत्र में अनुसूचित भूमि में प्रवेश करने या उत्तरवादीगण/वादीगण के आधिपत्य में हस्तक्षेप करने से रोकने हेतु स्थायी व्यादेश का एक वाद और साथ ही अस्थायी व्यादेश की मांग करते हुए व्यवहार प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 नियम 1 एवं 2 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया था। व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2, पंडरिया, कवर्धा ने दोनों पक्षों को सुनने और



सभी पहलुओं पर विचार करने के बाद, आदेश दिनांक 01.08.2008 द्वारा उत्तरवादीगण/वादीगण के आवेदन को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि उत्तरवादीगण/वादीगण अपने पक्ष में प्रथम दृष्टया प्रकरण, सुविधा का संतुलन और अपूरणीय क्षति स्थापित करने में विफल रहे हैं। विद्वान व्यवहार न्यायाधीश ने सभी शपथ पत्रों और दस्तावेजी साक्ष्यों पर विचार करने के बाद यह निर्धारित किया कि वादपत्र में अनुसूचित भूमि वादीगण और प्रतिवादीगण के संयुक्त आधिपत्य में है और प्रकरण पर विस्तार से विचार किए बिना, अंतर्वर्ती व्यादेश देने के लिए प्रत्येक पक्ष के आधिपत्य को निर्धारित करना कठिन है। इससे पूर्व, याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण ने उत्तरवादीगण/वादीगण द्वारा उनके आधिपत्य वाली भूमि के नामांतरण पर आपत्ति जताई थी। इसे देखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह अंतर्वर्ती व्यादेश के लिए उपयुक्त प्रकरण नहीं था।

3. इससे व्यथित होकर, उत्तरवादीगण/वादीगण ने अपर जिला न्यायाधीश, कबीरधाम (कवर्धा) के समक्ष विविध नागरिक अपील क्रमांक 05/2008 दायर की। विद्वान न्यायाधीश ने सभी पहलुओं पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि उत्तरवादीगण/वादीगण ने भूमि के विभाजन के बारे में कथन किया है और उत्तरवादीगण/वादीगण ने अपने कथन के



समर्थन में एक दस्तावेज भी प्रस्तुत किया है। याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण ने उत्तरवादीगण/वादीगण द्वारा प्रस्तुत कथन और दस्तावेजों के खंडन में कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया है। उस दृष्टिकोण से, उत्तरवादीगण/वादीगण ने प्रथम दृष्टया अपना आधिपत्य स्थापित किया है और इस प्रकार, उत्तरवादीगण/वादीगण ने सिद्ध किया है कि सुविधा का संतुलन उनके पक्ष में है और उन्हें अपूरणीय क्षति होगी। तदनुसार, व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2 द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.08.2008 को अपास्त कर दिया गया और उत्तरवादीगण/वादीगण द्वारा दायर आदेश 39 नियम 1 एवं 2 के तहत आवेदन को आदेश दिनांक 06.11.2008 (संलग्नक पी/1) द्वारा स्वीकार कर लिया गया। अतएव, यह याचिका दायर की गई है।

4. याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री संजय एस. अग्रवाल ने तर्क दिया कि व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2 द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.08.2008 (संलग्नक पी/12) न्यायसंगत और उचित था क्योंकि पक्षकारों के बीच मुख्य विवाद वादपत्र में अनुसूचित भूमि के विभाजन के संबंध में था। उत्तरवादीगण/वादीगण अपने पक्ष में प्रथम दृष्टया प्रकरण, सुविधा का संतुलन और अपूरणीय क्षति स्थापित करने में विफल रहे। विभाजन के संबंध में अपीलीय न्यायालय का यह



निष्कर्ष कि विभाजन हो चुका था, वादीगण द्वारा लिए गए किसी तर्क के बिना है। अभिवचनों के परिशीलन से ऐसा प्रतीत होता है कि वादीगण ने विभाजन का तर्क नहीं लिया है। पंच फैसले की पूरी तरह से उपेक्षा की गई है। इस प्रकार, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलट देना बिना किसी आधार के है क्योंकि विद्वान न्यायाधीश पंच फैसले और वादपत्र के कथनों पर विचार करने में विफल रहे हैं। यह एक संयुक्त हिंदू परिवार की संपत्ति है और सह-दायिकों के विरुद्ध कोई व्यादेश नहीं दिया जा सकता है।

5. इसके विपरीत, उत्तरवादीगण/वादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रफुल्ल भारत ने तर्क दिया है कि उत्तरवादीगण/वादीगण वाद संपत्ति को पूर्ण स्वामी के रूप में धारण कर रहे हैं और सुव्यवस्थित आधिपत्य में हैं। राजस्व अभिलेख भी यह दर्शाते हैं कि उत्तरवादीगण/वादीगण विवादित भूमि के भूमिस्वामी हैं और दूसरी ओर, याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा अभिनिर्धारित किए अनुसार, किसी भी दस्तावेज को प्रस्तुत करके उसका खंडन करने में विफल रहे हैं। विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि व्यादेश प्रदान करने हेतु आवेदन पर विचार करने के लिए, अंतर्वर्ती व्यादेश चाहने वाले के पक्ष में प्रथम दृष्टया प्रकरण, सुविधा का संतुलन और अपूरणीय क्षति



पर विचार किया जा सकता है। अंतर्वर्ती व्यादेश जैसे भी न्यायालय की विवेकाधीन अधिकारिता है।

6. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने के बाद, ऐसा प्रतीत होता है कि प्रथम दृष्टया याचिकाकर्तागण/उत्तरवादीगण विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों का खंडन करने में विफल रहे हैं। याचिकाकर्तागण/प्रतिवादीगण ने बिना किसी दस्तावेज के समर्थन के कुछ कथन किए हैं। इस स्तर पर, दोनों पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा दिए गए तर्कों के अनुसार प्रकरण के गुण-दोष में जाना उचित नहीं है।

7. यह सुस्थापित है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपनी पर्यवेक्षी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय की अधिकारिता सीमित है कि जब तक न्याय की गंभीर विफलता या विधि का घोर उल्लंघन न हो या न्यायालय ने विधि और तथ्य पर अपने आदेश को गलत दिशा न दी हो, उच्च न्यायालय को अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा किए गए ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए। वध्र्यान सिंह एवं अन्य विरुद्ध अमरनाथ एवं अन्य<sup>1</sup> के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त अधीक्षण की शक्ति का प्रयोग अत्यंत कम और

<sup>1</sup> ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 215



केवल उपयुक्त प्रकरणों में ही किया जाना चाहिए ताकि अधीनस्थ न्यायालयों को उनके प्राधिकार की सीमाओं के भीतर रखा जा सके न कि केवल त्रुटियों को सुधारने के लिए।

8. श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी विड (एस) फंदन सिंह एवं अन्य<sup>2</sup> के प्रकरण में, कंडिका 12 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:

"यह इंगित किया जा सकता है कि यह निष्कर्ष निकालना एक बात है कि विचारण न्यायालय ने गुण-दोष पर अपना प्रथम दृष्टया संतोष दर्ज नहीं किया है लेकिन अस्थायी व्यादेश प्रदान किया है, और यह दूसरी बात है कि विचारण न्यायालय ने प्रथम दृष्टया संतोष दर्ज करने में गलती की है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर उस निष्कर्ष को अपास्त करना क्योंकि उसने प्रासंगिक साक्ष्य पर विचार नहीं किया है या क्योंकि वह स्थापित तथ्यों पर गलत तरीके से निष्कर्ष पर पहुँचा है। पहली स्थिति में, अपीलीय न्यायालय प्रकरण के गुण-दोष में जाए बिना भी अपील के अधीन आदेश को उलटने में न्यायसंगत होगा, लेकिन दूसरी स्थिति में, वह अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विवेचन किए बिना और विपरीत निष्कर्ष दर्ज किए बिना आक्षेपित आदेश को अपास्त नहीं कर सकता। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के उपरोक्त निष्कर्षों की उपेक्षा करते हुए पहले आधार पर विचारण न्यायालय के आदेश को अपास्त करने की कार्यवाही की, इसलिए अपील अधीन आदेश पोषणीय नहीं है।"

9. सूर्या देव राय विरुद्ध राम चंदर राय एवं अन्य<sup>3</sup> के प्रकरण में, उच्चतम न्यायालय ने विधि की उस विधिक स्थिति को दोहराया जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा पूर्व में कई विनिश्चयों में तय किया गया है कि

<sup>2</sup> ए.आई.आर. 1999 एस.सी. 2322

<sup>3</sup> ए.आई.आर. 2003 एस.सी. 3044



पर्यवेक्षी अधिकारिता में उच्च न्यायालय खुद को अपीलीय न्यायालय में परिवर्तित नहीं करेगा और साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन या त्रुटियों के मूल्यांकन या निष्कर्ष निकालने में त्रुटियों को सुधारने या केवल तकनीकी या औपचारिक त्रुटियों को सुधारने में शामिल नहीं होगा।

10. **हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड विरुद्ध श्रीमन नारायण एवं अन्य<sup>4</sup>**, के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार निर्धारित किया:

"7. यह प्राथमिक है कि विधिक कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान अंतर्वर्ती व्यादेश प्रदान करना न्यायालय के विवेक के प्रयोग की आवश्यकता वाला विषय है। विवेक का प्रयोग करते समय न्यायालय सामान्यतः निम्नलिखित परीक्षण लागू करता है:

(i) क्या वादी के पास प्रथम दृष्टया प्रकरण है;

(ii) क्या सुविधा का संतुलन वादी के पक्ष में है; और

(iii) क्या अंतर्वर्ती व्यादेश की उसकी प्रार्थना अस्वीकार किए जाने पर वादी को अपूरणीय क्षति होगी।"

11. **हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड (पूर्वोक्त)** के प्रकरण में प्रतिपादित सिद्धांत को **सीमा अरशद जहीर एवं अन्य विरुद्ध म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन ऑफ ग्रेटर मुंबई एवं अन्य<sup>5</sup>** के प्रकरण में दोहराया गया और अभिनिर्धारित किया गया:

"30. न्यायालय के विवेक का प्रयोग अस्थायी व्यादेश प्रदान करने के लिए तभी किया जाता है जब वादी द्वारा निम्नलिखित आवश्यकताएं पूरी की जाती हैं: (i) अभिवचनों के अनुसार प्रथम

<sup>4</sup> (2002) 5 एस.सी.सी. 760

<sup>5</sup> (2006) 5 एस.सी.सी. 282



दृष्टया प्रकरण का अस्तित्व, जो अस्थायी व्यादेश जारी करके वादी के अधिकारों के संरक्षण की आवश्यकता उत्पन्न करता है; (ii) जब वादी के अधिकारों के संरक्षण की आवश्यकता की तुलना प्रतिवादी के अधिकार के संरक्षण की आवश्यकता या प्रतिवादी के अधिकारों के संभावित उल्लंघन से की जाती है, तो सुविधा का संतुलन वादी के पक्ष में झुकता है; और (iii) अस्थायी व्यादेश न दिए जाने पर वादी को अपूरणीय क्षति होने की स्पष्ट संभावना। इसके अतिरिक्त, अस्थायी व्यादेश एक साम्यापूर्ण अनुतोष होने के कारण, ऐसा अनुतोष प्रदान करने के विवेक का प्रयोग तभी किया जाएगा जब वादी का आचरण दोषमुक्त हो और न्यायालय में बेदाग होकर आए।"

12. उपरोक्त प्रकरणों में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत को लागू

करने पर, यह सुस्थापित है कि अंतर्वर्ती व्यादेश प्रदान करने के मामले

में, उत्तरवादीगण/वादीगण को अपने पक्ष में प्रथम दृष्टया प्रकरण, सुविधा

का संतुलन और अपूरणीय क्षति सिद्ध करनी होगी। इस न्यायालय को,

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपनी अधिकारिता के

प्रयोग में, किसी भी आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि

न्याय की गंभीर विफलता या विधि का घोर उल्लंघन न हो या न्यायालय

ने विधि और तथ्य पर अपने आदेश को गलत दिशा न दी हो। इस

प्रकरण के तथ्य पूरी तरह से विवादित हैं। इस प्रकार, किसी भी पक्ष के

लिए प्रथम दृष्टया प्रकरण स्थापित करना कठिन है।

13. प्रकरण की तथ्यात्मक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, याचिका को

आंशिक रूप से स्वीकार किया जाता है, अपीलीय आदेश को इस सीमा

तक संशोधित किया जाता है कि पक्षकार व्यवहार न्यायाधीश वर्ग-2 के





न्यायालय के समक्ष वाद के निराकरण तक प्रकरण के सभी पहलुओं के संबंध में यथास्थिति बनाए रखेंगे। वाद-व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

सही/-  
सतीश के. अग्निहोत्री  
न्यायाधीश

====0000====

**(Translation has been done with the help of AI Tool: SUVAS)**

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

